INTERNATIONAL JOURNAL OF HISTORY

E-ISSN: 2706-9117
P-ISSN: 2706-9109
www.historyjournal.net
IJH 2024; 6(1): 11-14
Received: 09-10-2023
Accepted: 15-11-2023

कृष्णा
पी.एच.डी. शोधार्थी, इतिहास विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
कृष्णा
पी.एच.डी. शोधार्थी, इतिहास विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

बुन्देलखण्ड समाज में महिलाओं की स्थिति

कृष्णा

DOI: https://doi.org/10.22271/27069109.2024.v6.i1a.254

सारांश
बुन्देलखण्ड समाज की विशेषताओं का निर्माण ऋग्वैदिक काल के अन्त में स्थापित वर्ण व्यवस्था के आधार पर हुआ था। वर्णव्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र नामक चार वर्ण समाहित थे। इन चारों वर्णों के लिए समाज में अलग–अलग कार्य निर्धारित किए गए थे। प्रारम्भ में वर्ण व्यवस्था कर्म आधारित थी जो उत्तर वैदिक काल में जन्म आधारित हो गयी। इसके बाद परिस्थिति अनुसार समाज में जाति व उपजातियों का समावेशन हुआ। इसके बावजूद बुन्देलखण्डी समाज का व्यवहारिक स्वरूप में तीन वर्ग– उच्च, मध्यम और निम्न ही रहे हैं। समाज का व्यवहारिक स्वरूप आर्थिक स्थिति के अनुसार ही होता था। इसी आर्थिक पृष्ठभूमि में तथा समाज के नियमों के अनुसार बुन्देलखण्ड समाज में महिलाओं के मान–सम्मान, सुख–सुविधाओं व अन्य अधिकारों का निर्धारण हुआ था।

कूटशब्द : मध्यकालीन समाज, बुन्देलखण्ड समाज, महिलाओं की स्थिति

प्रस्तावना
बुन्देलखण्ड भारत के हृदय भूमि पर स्थित है जिसमें उत्तर प्रदेश का दक्षिणी भाग और मध्य प्रदेश का उत्तरी भाग शामिल हैं। उत्तर प्रदेश के झाँसी, जालौन, हमीरपुर, बाँदा, ललितपुर तथा मध्य प्रदेश के सागर, पन्ना, दमोह, टीकमगढ़, छतरपुर, जबलपुर, दतिया और नरसिंहगढ़ जिलों से मिलकर मध्यकालीन बुन्देलखण्ड का निर्माण होता है।[1] भौगोलिक दृष्टि से बुन्देलखण्ड उत्तर में गंगा के मैदान, दक्षिण में विंध्य, पूर्व में बघेलखण्ड और उत्तर–पश्चिम में ग्वालियर व मालवा जैसी सांस्कृतिक इकाइयों से घिरा हुआ है।[2] कनिंघम ए. के अनुसार, बुन्देलखण्ड का क्षेत्र पश्चिम में बेतवा से पूर्व में मिर्जापुर के पास विंध्यवासिनी देवी (विंध्याचल) के मन्दिर तक फैली यमुना के दक्षिण में स्थित क्षेत्र है। दक्षिणी सीमा में नर्मदा के पास चन्देरी, सागर और दमोह जिलों के क्षेत्र शामिल है।[3]
बुन्देलखण्ड मध्यकाल में चन्देल अवशेषों पर स्थापित हुआ लेकिन केशवचन्द्र मिश्र का कहना है कि चन्देल राजाओं ने जिस भौगोलिक क्षेत्र पर शासन किया, उसका बोध बुंदेलखण्ड (बुन्देलों का देश) से नहीं करना चाहिए। बी.ए. स्मिथ की धारणा है कि बुन्देलखण्ड के नाम का उपयोग चेन्दलो के क्षेत्रों पर करना उचित नहीं है क्योंकि 'बुन्देलखण्ड' शब्द का प्रयोग चन्देलों के राज्य के लुप्त होने के लगभग एक शताब्दी पश्चात् 1335–40 ई. से प्रारम्भ हुआ। इसके बाद ही यह क्षेत्र बुन्देलखण्ड के नाम से प्रसिद्ध हुआ।[4] मध्यकाल में पन्ना के शासक छत्रसाल के समय बुन्देलखण्ड की सीमाओं के सम्बन्ध में कहावत प्रचलित है।

> ''इत जमुना उत नर्मदा, इत चंबल, उत टौंस।
> छत्रसाल से लड़न की रही, न काहू होंस।।''[5]

इस कहावत का अर्थ है कि यमुना, नर्मदा, चम्बल एवं टोंस नदियों से घिरे भू–भाग को बुन्देलखण्ड कहा जाता था। काशीप्रसाद त्रिपाठी का विचार है कि बुन्देलखण्ड की सीमा शासकों के विजय पराजय तथा प्रशासनिक व्यवस्था के अनुसार बुन्देलखण्ड राज्य की सीमाएँ घटती–बढ़ती रहती थी।[6] इस प्रकार बुन्देली बोली, समाज, लोकगीत, लोक मान्यताएँ, व्यवहार, धार्मिक विधान, रीति–रिवाज, संस्कृति आदि जिन क्षेत्र तक विस्तृत है, उन क्षेत्रों तक बुन्देलखण्ड की सीमाओं का निर्धारण करना तर्कसंगत होगा। इस प्रकार की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक विशेषताओं का विकास 1501 ई. में गढ़कुण्डार के अन्तिम राजा रुद्रप्रताप के द्वारा गढ़कुण्डार से ओरछा में राजधानी स्थानातंरित करने के पश्चात् होता है।[7]

रुद्रप्रताप (1501–1531 ई.) के शासक बनने के पश्चात् बुन्देलों के इतिहास में एक नया मोड़ आया। एक तरफ, रुद्रप्रताप बुन्देला के पश्चात् भारतीचन्द[8], मधुकरशाह[9], वीरसिंह देव[10] ने बुन्देलखण्ड का राजनीतिक विस्तार करते हुए, एक भौगोलिक व राजनीतिक इकाई के रूप में बुन्देलखण्ड को संगठित किया। दूसरी तरफ, जल संग्रहण व्यवस्था, स्थापत्यकला, भित्तिचित्रकला के निर्माण कार्यों व साहित्यकार संरक्षण द्वारा सांस्कृतिक आधार पर एक क्षेत्रीय पहचान प्रदान की। बुन्देला शासकों ने जयपुर कछवाहा शासकों के साथ पत्र–व्यवहार के माध्यम से राजपूतीकरण की पहचान को भी समाज में बनाए रखा। इससे सम्बन्धित पत्र सफिया खान ने पुस्तक बुन्देलखण्ड के दस्तावेज भाग–1,2,3 के नाम से प्रकाशित किए है।

16वीं शताब्दी में ही मुगलकालीन बुन्देलखण्ड समाज दुनिया के अन्य समाज की भाँति, व्यक्ति, उसका परिवार, मुहल्ला एवं गांव के व्यक्ति के परस्पर प्रेम, सद्भाव एवं एक–दूसरे के सुख–दुःख में सहयोग की नीति पर आधारित रहा हैं। इस सम्बन्ध में कहावत प्रचलित है–

''चित्रकूट में रम रहे, रहिमन अवध नरेश।
जापर विपदा परत है, सौ अवत इहि देश।।[11]

इस कहावत का अर्थ है कि बुन्देलखण्ड का जन–जीवन प्रेम, सौहार्द और पवित्रता से परिपूर्ण था लेकिन सत्ता स्थापित करने की लालसा ने प्रेम–सहयोग आधारित समाज को धीरे–धीरे शासक तथा शोषित समाज का रूप दे दिया। भारतीय समाज में ऋग्वैदिक काल के अन्त में स्थापित, वर्णव्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र नामक चार वर्ण समाहित थे। इन चारों वर्णों के लिए समाज में अलग–अलग कार्य निर्धारित किए गए थे। प्रारम्भ में वर्ण व्यवस्था कर्म–आधारित थी। यह उत्तर वैदिक काल में जन्म आधारित हो गयी। वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण सर्वप्रथम आते हैं। इसके कार्यों में यज्ञ करना, अध्ययन और अध्यापन करना, राजाओं को परामर्श देना व जन्म से मृत्यु तक प्रत्येक धार्मिक क्रियाएँ ब्राह्मणों के द्वारा ही सम्पन्न की जाती थी। दूसरे स्थान पर क्षत्रिय आते हैं। यह समाज में शासक के प्रत्येक कार्य का निर्वाह करते थे। तीसरे स्थान पर वैश्य आते हैं। इनका कार्य आर्थिक क्रियाओं से सम्बन्धित था। अन्तिम स्थान पर शूद्र थे जिनका कार्य तीनों वर्णों की सेवा करना था।[12] गुप्तोत्तर काल तक वर्ण व्यवस्था के नियमों में सामंती व्यवस्था के कारण परिवर्तन आ गया। बुन्देलखण्ड समाज भी वर्ण–व्यवस्था आधारित रहा हैं। वीरसिंह देव चरित के अनुसार, राजा और प्रजा के हितार्थ चारों वर्णों के साथ उनके अनुरूप ही समुचित व्यवहार किया जाना चाहिए।[13]

बहुव दी मागध सूव मुनि गुनि दसो छिय साबि निति।
रैयत राउत, राजहित चारयो वरन विचारि चित।

भारतीय समाज का मूल आधार जन्म आधारित वर्णव्यवस्था ने बुन्देलखण्ड में सामाजिक भेदभाव की पृष्ठभूमि को तैयार किया। समयानुसार जाति व उपजातियों का भी समावेशन हुआ। बुन्देलखण्ड समाज के सम्बन्ध में काशीप्रसाद त्रिपाठी का विचार है कि बुन्देलखण्डी समाज का व्यवहारिक स्वरूप में तीन वर्ग– उच्च, मध्यम और निम्न ही रहे है।[14] इसी प्रकार की भेदभाव युक्त सामाजिक पृष्ठभूमि में महिलाओं की स्थिति भी निर्धारित होती है।

ऋग्वैदिक काल में महिलाओं की सामाजिक स्थिति अच्छी देखने को मिलती है वहीं उत्तर वैदिक काल में महिलाओं की दशा व अधिकारों में निरन्तर गिरावट देखने को मिलती हैं। महिलाओं से सम्बन्धित विचारों को मध्यकालीन बुन्देलखण्डी समाज में भी अपनाया गया। इसी कारण बुन्देलखण्ड में महिलाओं की दशा अधिक अच्छी नहीं रही। घर में पुत्री का जन्म होना दुःख का कारण होता था। स्त्रियों को जन्म से मृत्यु तक अपने माता–पिता, पति, पुत्रों के और उनके अभाव में किन्हीं रिश्तेदारों के संरक्षण में रहना पड़ता था। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण पुत्री की देखभाल की ओर कम ध्यान दिया जाता था। इस कारण कुपोषण एवं बीमारियों में उदासीनता के चलते लड़कियों की मृत्यु दर भी अधिक थी।[15]

विवाह के बाद स्त्रियों को अपना पूरा जीवन अपने पति की अधीनता में व्यतीत करना होता था। पति की सेवा करना और उनकी इच्छा के अनुसार ही उनको कार्य करना पड़ता था। अपने पति के चरण स्पर्श कर उनके चरण धोकर उन्हें पोंछना, मुँह धुलाना, पंखा करना, पान का बीड़ा देना, उनके लिए श्रृंगार करना, मन बहलाव के लिए गायन–वादन नृत्य करना आदि आदर्श पत्नियों के गुण समझे जाते थे। स्त्रियों के लिए पति ही परमेश्वर थे।[16] इस सम्बन्ध में केशवदास लिखते है–

नारी तजै न आपनो सपनेहूँ भरतार।
पुंग पंगु बौरी बधिर अंध अनाथ अपार।
अंध अनाथ अपार वृद्ध बावन अति रोगी।
बालक पंडु कुरूप सदा कुवचन जड़ जोगी।
कलही कोढ़ी भीरू चोर ज्वारी बिभिचारी।
अधम अभागो कुटिल कुपति पति तजैं न नारी।[17]

विधवा को समाज में उपेक्षित जीवन व्यतीत करना पड़ता था। विधवा पर अच्छे वस्त्र धारण करने व श्रृंगार करने पर पाबन्दी थी। यदि कोई विधवा से विवाह करता अथवा कोई नारी पति को त्यागकर किसी अन्य पुरुष से सम्पर्क स्थापित करती तो ऐसे परिवारों को वर्णसंकर एवं जाति द्रोही करार कर, बिरादरी से निष्कासित कर दिया जाता था लेकिन मध्यम तथा निम्न वर्गों में तलाक या अन्य पति या स्त्री को रख लेना सामान्य बात थी।[18] स्त्री का कर्त्तव्य पति की सेवा करना बताया गया। यही उसकी मुक्ति का मार्ग था। इस कारण यह था कि मुगलकालीन समाज के समान बुन्देलखण्डी समाज भी पुरुष प्रधान था। केशवदास ने महिलाओं की हीन स्थिति पर व्यंग्य काव्य के माध्यम से व्यक्त किया है–

पति पतिनी बहु करै, पतिनी न पति बहु करही।
पति हित पतिनी जरहि, पति न पतिनी हित मर ही।[19]

इन पंक्तियों का अर्थ है कि बुन्देलखण्ड समाज में पुरुष बहु–विवाह कर सकते थे लेकिन स्त्रियों को एक ही विवाह करने की आज्ञा थी। पत्नी की स्थिति बिना पति के बिना पानी के मछली के समान हो जाती थी। घूँघट निकालने की प्रथा भी समाज में विद्यमान थी इसकी पुष्टि वीरसिंह देव चरित में पृष्ठ संख्या–272 से होती है। इस सम्बन्ध में भगवान दास गुप्त का कहना है– उच्च तीन वर्ण में घूँघट निकालने की प्रथा थी जबकि निम्न वर्ग तथा व्यवसाय से सम्बन्धित स्त्रियाँ घूँघट का इस्तेमाल कम करती थी क्योंकि उन्हें काम करते हुए असुविधा होती थी।

कुछ स्त्रियाँ पुरुष वर्ग का मनोरंजन करती थी इन्हें गणिका, वेश्या, पातुरिया और नटनियाँ कहा जाता था। ये नाच–गायन करती थी। इसके फलस्वरूप भरपूर कीमत प्राप्त होती थी। इसमें से कोई एकाध गणिका या वेश्या प्रेमी की चेहती बनकर पतिव्रता धर्म का पालन करने का प्रयत्न करती थी। इसका उदाहरण मधुकरशाह और वीरसिंह देव के समय पिछौर के इन्द्रजीत सिंह की प्रेमिका प्रवीणराय है। प्रवीणराय बहुत ही प्रबद्ध गयिका, नृत्यांगना तथा कवयित्री थी।[20]

गणिकाओं में कुछ उच्च श्रेणी की गणिकाएँ होती थी जो अवश्य पढ़ी–लिखी होती थी।[21] उच्च वर्ग या राजघराने से सम्बन्धित महिलाओं की स्थिति, अन्य वर्ग की महिलाओं की तुलना अच्छी

रही होगी। इस सम्बन्ध में सफिया खान द्वारा लिखित बुन्देलखण्ड के दस्तावेज भाग–3 से बुन्देला शासकों द्वारा जयपुर शासकों के लिखे खरीतेजात (पत्र) प्राप्त होते हैं।[22] इन पत्रों में पन्ना की महारानी के द्वारा जयपुर शासकों को पारिवारिक समारोह में आने के लिए भेजे गए निमंत्रण पत्र भी प्राप्त होते हैं। 1903 ई. में पन्ना की मांजी साहिबा द्वारा जयपुर महाराजा मानसिंह को अपनी नातिन कुसुम कँवर जूदेवी के विवाह में आने के लिए निमंत्रण पत्र भेजा। पत्र में जयपुर महाराजा से विवाह में सपरिवार पधारने का अनुग्रह किया गया है। पत्र का विवरण इस प्रकार है–

श्री जगदीश जू
नकल खरीता राज्य पन्ना
श्री

श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा श्री रामराजेन्द्र सवाई महाराजा साहिब बहादुर मानसिंह जूदेव सरामद राजहाय हिन्दुस्तान येते श्री श्रीमती माजी साहिबा जूदेवी के वांचने आपर वहाँ के समाचार भले चाहिये यहाँ के समाचार–की कृपा से भले हैं आपर यहाँ पर श्री श्री बड़ी महाराज कुमारी नातिन रज्जू राजा साहिबा कुसुम कुंवर जूदेवी को विवाह श्री श्री श्री महाराजा मणिक्यावीर विक्रम किशोर देववर्मन बहादुर जूदेव त्रिपुरा के साथ होना निश्चित हुवा है और ज्येष्ठ शुक्ल 8 सोमवार तदनुसार तारीख 25 मई सन् 1931 ई. को मण्डपाच्छान तथा ज्येष्ठ शुक्ल 1 सोमवार को मातृका पूजन व ज्येष्ठ शुक्ल 10 तद्पर 11 बुधवार को ऊबनी टीका व ज्येष्ठ शुक्ल 12 गुरूवार तदनुसार तारीख 28 मई सन् 1931 ईस्वी को परिक्रमा है ताकौ निमंत्रण पत्र लेकर श्री श्रीकुंवर तिलोक सिंह जूदेव पठुवाये हैं सो आशा है कि आप सकुटुंब पधार कर इस उत्सव को सुशोभित करेंगे शुभमिति ज्येष्ठ कृष्ण 8 शनिवार संवतु 1987 रात मुकाम राज्य पन्ना म्हौर छोटी।

कागज टिकडीदार लिफाफा आंक ई माफक श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा श्री राजराजेन्द्र सवाई महाराजा साहिब बहादुर मानसिंह जूदेव सदामद राजहाय हिन्दुस्थान जैपुर लिफाफो चोंकुटनो बड़ो बेलदार तीपर म्होर बड़ी हिन्दवी थैली लाल पारचा की गलेफ जालीदार–लखोटै म्होर तीमे आंक ई माफिक–श्री महाराजकुमार श्री रावरानी साहिबा जूदेव्य तारीख 10 अप्रैल सन् 1903 ई. संवत् 1959 पन्ना–और खरीता की साथ म्हारे थान 1 मुर्शिबादी।

इसी प्रकार निमंत्रण पत्र नन्हें उल्लू भारतेन्दु सिंह जूदेव के विवाह के उपलक्ष्य पर लिखा था। 1936 ई. में पुनः मांजी साहिबा द्वारा मानसिंह को नाती राजा नरेन्द्र सिंह जूदेव के व्रतबन्ध, मराड पाच्छादन एवं मातृका पूजन के कार्यक्रमों के बारे में सूचित किया गया है। इसी प्रकार अन्य पत्रों द्वारा भी मांजी साहिबा ने जयपुर सवाई मानसिंह को पारिवारिक कार्यक्रमों के लिए निमंत्रण पत्र भेजा था। इन पत्रों से स्पष्ट है कि राजघराने से सम्बन्धित महिलाओं की स्थिति सम्मानजनक व शिक्षित रही होगी। लेकिन यह भी हो सकता है कि पन्ना राज्य की मांजी साहिबा ने पत्र स्वयं न लिखकर किसी ओर कायस्थ वर्ग के व्यक्ति के द्वारा आज्ञा देकर लिखवाया हों। दरबार में ऐसा व्यक्ति पत्र–व्यवहार के लिए नियुक्त रहा होगा। लेकिन यह ज्ञात होता है कि बुन्देलखण्ड में राजघराने की महिला पारिवारिक रूप से सम्मानजनक स्थिति में थी। जयपुर शासकों के साथ पारिवारिक सम्बन्धों को निभाकर महिलाओं ने बुन्देलखण्ड की राजपूतीकरण की प्रक्रिया में योगदान दिया।

केशवदास भी ओरछा में महिलाओं की शिक्षा पर अपने काव्य में लिखते हैं कि ओरछा राज्य में चित्रणी, हस्तिनी जाति की अनेक रमणियाँ निवास करती है, वे गीत गाती है, वीणा को बजाती है, कहीं पर वे पढ़ाती है और स्वयं भी पढ़ती है। कवि ओरछा के सामाजिक जीवन का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि कहीं पर बालायें मंजन करती है, शरीर पर अगराग धारण करती है, शरीर आभूषण से सुशोभित है। बालिकायें तोते को पढ़ाती है।[23] लेकिन इसे ओरछा की वास्तविकता स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि केशवदास ने अपने संरक्षक वीरसिंह देव की प्रशंसा में काव्य लिखा था।

बुन्देलखण्ड के इतिहास में कुछ ऐसी महिलाओं के नाम भी मिलते हैं जिन्होंने ब्रिटिश शासन के दौरान स्वतन्त्रता संग्राम में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वाह किया। इनमें महारानी लड़ई सरकार टीकमगढ़, प्राण कुँवर दतिया, मधुरानी छतरपुर, महारानी जैतपुर, लर्ड़इ दुलैया यादव नैगुवारिबई, महारानी लक्ष्मीबाई झाँसी, रानी समथर, महारानी विजावर, बाई साहिबा लक्ष्मीबाई जालौन, राधाबाई, रुकमाबाई सागर, अजयगढ़ बेरी जिगनी की रानियाँ और कौंच की बीमाबाई साहिबा विशेष उल्लेखनीय है।[24] बुन्देलखण्ड महिलाओं की वीरता से भयभीत होकर ब्रिटिश गर्वनर जनरल लार्ड डलहौजी ने महिलाओं को प्रशासन भागीदार से दूर रखने का प्रयास किया। लार्ड डलहौजी ने 1854 ई. में छतरपुर के राजा जगतराज की सनद में स्पष्ट उल्लेख कर दिया था कि जगतराज के पश्चात् राज्य का उत्तराधिकारी केवल पुरुष को ही माना जायेगा। मध्यम और निम्न वर्गों की स्त्रियों में चरखानी की खैरानी अहीरन, रमिया और सीता गुसाईन ने तातिया टोपे के विद्रोही, लुटेरे सैनिकों से संघर्ष करते हुए उनके हथियार छीन लिये थे।[25] इस आधार पर स्पष्ट होता है कि बुन्देलखण्ड समाज में महिला ब्रिटिश शासन के दौरान बुन्देलखण्ड अस्तित्व के लिए संघर्ष में शामिल थी। महिला के लिए उच्च या निम्न वर्ग से सम्बन्धित होना मायने नहीं रखता था। बुन्देलखण्ड स्थापत्यकला में चित्रित भित्तिचित्र भी समाज में महिलाओं की स्थिति से परिचित कराते हैं। ओरछा में लक्ष्मी मन्दिर में पुरुष व महिलाओं के भित्तिचित्र प्राप्त होते हैं। लक्ष्मी मन्दिर में दो महिलाओं का भित्तिचित्र मिलता है जिसमें एक महिला बाल गूंथ रही है जबकि दूसरी उसको दर्पण दिखा रही है। बाल गूंथ रही महिला ने साड़ी पहन रखी है तथा दूसरी महिला ने घाघरा–चोली पहन रखी है। शृंगार के लिए पायल, चूड़ी, कानों में बालियाँ जैसे आभूषणों को पहना हुआ है। दूसरे चित्र में भी यही दृश्य है लेकिन इसमें बाल संवारती महिला की पोशाक व शृंगार एक राजघराने की महिला के समान है। अन्य चित्र में एक महिला ने राजघराने से सम्बन्धित पोशाक पहनी है। महिला फूल को तोड़ रही है उसके पीछे एक रक्षक तलवार के साथ खड़ा है। महिला ने सिर पर ओढ़नी ओढ़ रखी है। इन चित्रों से ओरछा में महिलाओं की सामाजिक स्थिति स्पष्ट होती है। राजघराने की महिलाओं की स्थिति सम्मानजनक और जीवन सुविधापूर्ण था। इनकी सुरक्षा का भी ध्यान रखा जाता था।

बुन्देलखण्ड में राजघराने की महिलाओं की स्थिति अच्छी थी। इसका कारण आर्थिक रूप से मजबूत होना था। घर की आर्थिक स्थिति का मजबूत होना ही समाज में महिलाओं की सम्मानजनक स्थिति का निर्धारण करती थी। त्रिपाठी का विचार है कि बुन्देलखण्ड में महिलाओं की संख्या की कमी होते हुए भी, महिलाओं की दुर्दशा आर्थिक तंगी, पिछड़ापन, गरीबी, अशिक्षा, शोषण एवं छीना–झपटी की सामंती प्रथा के कारण खराब थी। पिछड़ी दलित जातियों की महिलाएँ नाचने और वेश्यावृति का धंधा कर अपने परिवारों का पालन–पोषण करती थी। इनको बेड़नी कहा जाता रहा है। इन बेड़िया–बेड़नियों के अनेक गाँव सागर एवं ललिलपुर क्षेत्रों में बसे हुए हैं।[26] बुन्देलखण्ड में श्रमिक वर्ग की महिलाओं को पुरुषों की तुलना में कम मजदूरी दी जाती थी। महिलाऐं आर्थिक तंगी के कारण पतियों की मारपीट अपमानजनक शब्द को झेलती थी। साथ ही, बाहर मजदूरी करते हुए बलात्कार को भी भोगती थी।

लड़की की शादी कम उम्र में अधिक उम्र के लड़के के साथ उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी होने के कारण कर दी जाती थी। इस कारण से समाज में अनमेल, बहु विवाह प्रचलित थी। महिला

प्रत्येक अधिकार से वंचित थी। घर की सम्पत्ति पशुधन, खेत, बाल–बच्चों, पत्नी का स्वामी पति होता था।[27] बाल–विवाह, सती प्रथा, विधवा पुनः विवाह न होना, जौहर जैसी प्रथाओं ने बुन्देलखण्ड समाज में भी प्रचलित है। बुन्देलखण्ड में स्थान–स्थान पर सत्ती चौरा और सत्ती स्तंभ पाये जाते हैं। लेकिन 1835 ई. में अंग्रेजी क्षेत्र में तथा 1847 ई. से रियासती क्षेत्रों में सत्ती होना अपराध घोषित कर दिया था।[28]

सभी स्रोतों का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि बुन्देलखण्ड समाज में महिला की स्थिति भारतीय समाज की ही भाँति दयनीय थी। घर की आर्थिक स्थिति ही किसी महिला की शिक्षा स्तर, पोषण, रहन–सहन आदि का निर्धारण करती थी। समाज में निम्न वर्ग व दलित वर्ग की महिलाओं का जीवन कष्टपूर्ण था जबकि उच्च घराने की महिलायें समाज में सुविधापूर्ण जीवन व्यतीत करती थी। अन्यथा बुन्देलखण्ड समाज में, भारतीय समाज की भाँति ही महिलाओं के अधिकारों, कार्यों का निर्धारण किया गया था।

सन्दर्भ

1. भगवान गुप्त, मुगलों के अन्तर्गत बुन्देलखण्ड का सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, 1531–1731, (नई दिल्ली : हिन्दी बुक सेन्टर, 1997), 3.
2. बी.एल. वर्मा, ज्योग्राफी ऑफ बुन्देलखण्ड, (नई दिल्ली : राज पब्लिकेशन, 2020), 2.
3. अलेक्जण्डर कनिंघम, दी एनसियन्ट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया, दी बुदिस्ट पीरियड, (लंदन : टरूबनरू एण्ड कोपॉरेशन, पेटरनोस्टर, 1871), 481–482.
4. केशवचन्द्र मिश्र, चन्देल और उनका राजत्व काल, (काशी : नागरी प्रचारिणी सभा, 2011), 5.
5. केशवदास, वीरसिंह देव चरित, व्याख्याकार किशोरीलाल, (इलाहाबाद : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1996), 1.
6. काशीप्रसाद, बुन्देलखण्ड का सामाजिक–आर्थिक इतिहास, (नई दिल्ली : समय प्रकाशन, 2006), 12.
7. काशीप्रसाद त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद् इतिहास, राजतन्त्र से जनतंत्र, (नई दिल्ली : समय प्रकाशन, 2020), 58.
8. गुप्त, मुगलों के अर्न्तगत बुन्देलखण्ड का सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक इतिहास, 9.
9. ईर्स्टन स्टेट गजेटियर, 18–19.
10. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद् इतिहास, 65.
11. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद् इतिहास, 302.
12. उत्तर प्रदेश डिस्ट्रीक गजेटियर, हमीरपुर, 60.
13. केशवदास, वीरसिंह देव चरित, 205.
14. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का सामाजिक–आर्थिक इतिहास, 38–39.
15. गुप्त, मुगलों के अर्न्तगत बुन्देलखण्ड का सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, 1531–1731, 85.
16. गुप्त, मुगलों के अन्तर्गत बुन्देलखण्ड का सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, 1531–1731, 85–86.
17. केशवदास, रामचन्द्रिका, (बम्बई : श्रीवेड़काटेश्वर यन्त्रालय, 1964), 274–275.
18. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का सामाजिक–आर्थिक इतिहास, 108.
19. केशवदास, वीरसिंह देव चरित, 538.
20. गुप्त, मुगलों के अर्न्तगत बुन्देलखण्ड का सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक इतिहास, 1531–1731, 86.
21. केशवदास, वीरसिंह देव चरित, 97–98.
22. सफिया खान, बुन्देलखण्ड के दस्तावेज, भाग–3, (बीकानेरः मरुभूमि शोध संस्थान, 2014), 107,109,113,119.
23. केशवदास, वीरसिंह देव चरित, 250–251.
24. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद इतिहास, 304.
25. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद् इतिहास, 304.
26. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का सामाजिक–आर्थिक इतिहास, 110–114.
27. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का सामाजिक–आर्थिक इतिहास, 110.
28. त्रिपाठी, बुन्देलखण्ड का बृहद् इतिहास, 304.